जैनदर्शन और विश्वशान्ति

विश्वशान्तिके लिए जिन विचारसहिष्णुता, समझौतेकी भावना, वर्ण, जाति, रंग और देश आदिके भेदके बिना सबके समानाधिकारकी स्वीकृति, व्यक्तिस्वातन्त्र्य और दूसरेके आन्तरिक मामलोंमें हस्तक्षेप न करना आदि मूलभूत आधारोंकी अपेक्षा है उन्हें दार्शनिक भूमिकापर प्रस्तुत करनेका कार्य जैनदर्शनने बहुत पहलेसे किया है। उसने अपनी अनेकान्तदृष्टिसे विचारनेकी दिशामें उदारता, व्यापकता और सहिष्णुताका ऐसा पल्लवन किया है, जिससे व्यक्ति दूसरेके दृष्टिकोणको भी वास्तविक और तथ्यपूर्ण मान सकता है। इसका स्वाभाविक फल है कि समझौतेकी भावना उत्पन्न होती है। जब तक हम अपने ही विचार और दृष्टिकोणको वास्तविक और तथ्य मानते हैं तब तक दूसरेके प्रति आदर और प्रामाणिकताका भाव ही नहीं हो पाता। अतः अनेकान्तदृष्टि दूसरोंके दृष्टिकोणके प्रति सहिष्णुता, वास्तविकता और समादरका भाव उत्पन्न करती है।

जैनदर्शन अनन्त आत्मवादी है। वह प्रत्येक आत्माको मूलमें समानस्वभाव और समानधर्मवाला मानता है। उनमें जन्मना किसी जातिभेद या अधिकारभेदको नहीं मानता। वह अनन्त जड़पदार्थोंका भी स्वतन्त्र अस्तित्व मानता है। इस दर्शनने वास्तव बहुत्वको मानकर व्यक्तिस्वातन्त्र्यकी साधार स्वीकृति दी है। वह एक द्रव्यके परिणमनपर दूसरे द्रव्यका अधिकार नहीं मानता। अतः किसी भी प्राणीके द्वारा दूसरे प्राणी का शोषण, निर्दलन या स्वायत्तीकरण ही अन्याय है। किसी चेतनका अन्य जड़ पदार्थोंको अपने अधीन करने की चेष्टा करना भी अनधिकार चेष्टा है। इसी तरह किसी देश या राष्ट्रका दूसरे देश या राष्ट्रको अपने अधीन करना, उसे अपना उपनिवेश बनाना ही मूलतः अनधिकार चेष्टा है, अतएव हिंसा और अन्याय है।

वास्तविक स्थिति ऐसी होनेपर भी जब आत्माका शरीरसंधारण और समाजनिर्माण जड़पदार्थोंके बिना संभव नहीं है; तब यह सोचना आवश्यक हो जाता है कि आखिर शरीरयात्रा, समाजनिर्माण और राष्ट्रसंरक्षा आदि कैसे किए जाँय? जब अनिवार्य स्थितिमें जड़पदार्थोंका संग्रह और उनका यथोचित विनियोग आवश्यक हो गया, तब यह उन सभी आत्माओंको ही समान भूमिका और समान अधिकारसे चादरपर बैठकर सोचना चाहिये कि 'जगत्के उपलब्ध साधनोंका कैसे विनियोग हो?" जिससे प्रत्येक आत्माका अधिकार सुरक्षित रहे और ऐसी समाजका निर्माण संभव हो सके, जिसमें सबको समान अवसर और सबकी समानरूपसे प्रारम्भिक आवश्यकतओंकी पूर्ति हो सके। यह व्यवस्था ईश्वरनिर्मित होकर या जन्मजात वर्गसंरक्षणके आधारसे कभी नहीं जम सकती, किन्तु उन सभी समाजके घटक अंगोंकी जाति, वर्ण, रंग और देश आदिके भेदके बिना निरुपाधि समानस्थितिके आधारसे ही बन सकती है। समाजव्यवस्था ऊपरसे बदलनी नहीं चाहिये, किन्तु उसका विकास सहयोगपद्धतिसे सामाजिक भावनाकी भूमिपर होना चाहिये, तभी सर्वोदयी समाज-रचना हो सकती है। जैनदर्शनने व्यक्तिस्वातन्त्र्यको मूलरूपमें मानकर सहयोगमूलक समाजरचना का दार्शनिक आधार प्रस्तुत किया है। इसमें जब प्रत्येक व्यक्ति परिग्रहके संग्रहको अनधिकारवृत्ति मानकर ही अनिवार्य या अत्यावश्यक साधनोंके संग्रहमें प्रवृत्ति करेगा, सो भी समाजके घटक अन्य व्यक्तियोंको समानाधिकारी समझकर उनकी भी सुविधाका विचार करके ही; तभी सर्वोदयी समाजका स्वस्थ निर्माण संभव हो सकेगा।

निहित स्वार्थवाले व्यक्तियोंने जाति, वंश और रंग आदिके नामपर जो अधिकारोंका संरक्षण ले रखा है तथा जिन व्यवस्थाओंने वर्गविशेषको संरक्षण दिये हैं, वे मूलतः अनधिकार चेष्टाएँ हैं। उन्हें मानव-

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हित और नवसमाजरचनाके लिए स्वयं समाप्त होना ही चाहिए और समान अवसरवाली परम्पराका सर्वाभ्युदयकी दृष्टिसे विकास होना चाहिए।

इस तरह अनेकान्तदृष्टिसे विचारसहिष्णुता और परसन्मानकी वृत्ति जग जानेपर मन दूसरेके स्वार्थ को अपना स्वार्थ माननेकी ओर प्रवृत्त होकर समझौतेकी ओर सदा झुकने लगता है। जब उसके स्वाधिकार के साथ-ही-साथ स्वकर्त्तव्यका भी भाव उदित होता है; तब वह दूसरेके आन्तरिक मामलोंमें जबरदस्ती टाँग नहीं अड़ाता। इस तरह विश्वशान्तिके लिए अपेक्षित विचारसहिष्णुता, समानाधिकारकी स्वीकृति और आन्तरिक मामलोंमें अहस्तक्षेप आदि सभी आधार एक व्यक्तिस्वातन्त्र्यके मान लेनेसे ही प्रस्तुत हो जाते हैं। और जब तक इन सर्वसमतामूलक अहिंसक आधारोंपर समाजरचनाका प्रयत्न न होगा, तब तक विश्वशान्ति स्थापित नहीं हो सकती। आज मानवका दृष्टिकोण इतना विस्तृत, उदार और व्यापक हो गया है जो वह विश्वशान्तिकी बात सोचने लगा है। जिस दिन व्यक्तिस्वातन्त्र्य और समानाधिकारकी बिना किसी विशेषसंरक्षणके सर्वसामान्यप्रतिष्ठा होगी, वह दिन मानवताके मंगलप्रभातका पुण्यक्षण होगा। जैनदर्शनने इन आधारोंको सैद्धान्तिक रूप देकर मानवकल्याण और जीवनकी मंगलमय निर्वाहपद्धतिके विकासमें अपना पूरा भाग अर्पित किया है। और कभी भी स्थायी विश्वशान्ति यदि संभव होगी, तो इन्हीं मूल आधारोंपर ही वह प्रतिष्ठित हो सकती है।

भारत राष्ट्रके प्राण पं० जवाहरलाल नेहरूने विश्वशान्तिके लिए जिन पंचशील या पंचशिलाओंका उद्घोष किया था और बाडुङ्ग सम्मेलनमें जिन्हें सर्वमतिसे स्वीकृति मिली, उन पंचशीलोंकी बुनियाद अनेकान्तदृष्टि—समझौतेकी वृत्ति, सहअस्तित्वकी भावना, समन्वयके प्रति निष्ठा और वर्ण, जाति, रंग आदिके भेदोंसे ऊपर उठकर मानवमात्रके सम-अभ्युदयकी कामनापर ही तो रखी गई है। और इन सबके पीछे है मानवका सम्मान और अहिंसामूलक आत्मौपम्यकी हार्दिक श्रद्धा। आज नवोदित भारतकी इस सर्वोदयी परराष्ट्रनीतिने विश्वको हिंसा, संघर्ष और युद्धके दावानलसे मोड़कर सहअस्तित्व, भाईचारा और समझौते की सद्भावनारूप अहिंसाकी शीतल छायामें लाकर खड़ा कर दिया है। वह सोचने लगा है कि प्रत्येक राष्ट्र को अपनी जगह जीवित रहनेका अधिकार है, उसका आस्तित्व है, परके शोषणका उसे गुलाम बनानेका कोई अधिकार नहीं है, परमें उसका अस्तित्व नहीं है। यह परके मामलोंमें अहस्तक्षेप और स्वास्तित्वकी स्वीकृति ही विश्वशान्तिका मूलमन्त्र है। यह सिद्ध हो सकती है—अहिंसा, अनेकान्तदृष्टि और जीवनमें भौतिक साधनोंकी अपेक्षा मानवके सम्मानके प्रति निष्ठा होनेसे। भारत राष्ट्रने तीर्थङ्कर महावीर और बोधिसत्त्व गौतमबुद्ध आदि सन्तोंकी अहिंसाको अपने संविधान और परराष्ट्रनीतिका आधार बनाकर विश्वको एक बार फिर भारतकी आध्यात्मिकताकी झाँकी दिखा दी है। आज उन तीर्थङ्करोंकी साधना और तपस्या सफल हुई है कि समस्त विश्व सह-अस्तित्व और समझौतेकी वृत्तिकी ओर झुककर अहिंसकभावनासे मानवताकी रक्षाके लिए सन्नद्ध हो गया है।

व्यक्तिकी मुक्ति, सर्वोदयी समाजका निर्माण और विश्वकी शान्तिके लिए जैनदर्शनके पुरस्कर्ताओंने यही निधियाँ भारतीय संस्कृतिके आध्यात्मिक कोषागारमें आत्मोत्सर्ग और निर्ग्रन्थताकी तिल-तिल साधना करके संजोई हैं। आज वह धन्य हो गया कि उसकी उस अहिंसा, अनेकान्तदृष्टि और अपरिग्रहभावनाकी ज्योतिसे विश्वका हिंसान्धकार समाप्त होता जा रहा है और सब सबके उदयमें अपना उदय मानने लगे हैं।

राष्ट्रपिता पूज्य बापूकी आत्मा इस अंशमें सन्तोषकी साँस ले रही होगी कि उनने अहिंसा संजीवन

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

का व्यक्ति और समाजसे आगे राजनैतिक क्षेत्रमें उपयोग करनेका जो प्रशस्त मार्ग सुझाया था और जिसकी अटूट श्रद्धामें उनने अपने प्राणोंका उत्सर्ग किया, आज भारतने दृढ़तासे उसपर अपनी निष्ठा ही व्यक्त नहीं की, किन्तु उसका प्रयोग नव एशियाके जागरण और विश्वशान्तिके क्षेत्रमें भी किया है। और भारतकी 'भा' इसीमें है कि वह अकेला भी इस आध्यात्मिक दीपको संजोता चले, उसे स्नेह दान देता हुआ उसीमें जलता चले और प्रकाशकी किरणें बखेरता चले। जीवनका सामंजस्य, नवसमाजनिर्माण और विश्वशान्तिके यही मूलमन्त्र हैं। इनका नाम लिये बिना कोई विश्वशान्तिकी बात भी नहीं कर सकता।

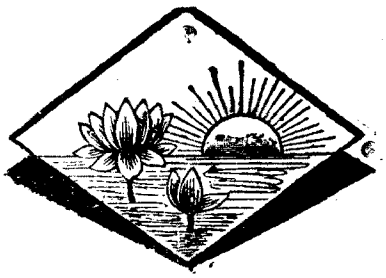

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org